IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

डॉ. सूरज सिंह नेगी के 'मेरी ईजा' संस्मरण में चित्रित पहाड़ी जीवन की रमणीयता

Puja chauhan

संस्मरण में लेखक जो कुछ देखता है, अनुभव करता है उसका चित्रण करता है। लेखक की स्वयं की अनुभूतियाँ तथा संवेदनाएँ संस्मरण में अंतर्निहित होती है। हिंदी साहित्य में प्रथम संस्मरण 1907 में बालमुकुंद गुप्त द्वारा लिखित 'पं. प्रतापनारायण मिश्र: एक संस्मरण' है।

संस्मरण का सामान्य तौर पर अर्थ होता है- बार-बार याद करना, महत्वपूर्ण भूतकाल की घटना या स्मृति का स्मरण करना।

संस्मरण वह लेखक की यादों का संग्रह है, जिसका उद्देश स्वयं के जीवन की कहानियों को पकड़ना है। ये यादें आमतौर पर लेखक के जीवन की घटनाएँ या अनुभव होता है, जिन्होंने लेखक को निश्चित तरीके से प्रभावित किया है।

संस्मरण के बारे में डॉ. सूरज सिंह के शब्दों में "मानव मन का असल संगी उसके अतीत की स्मृतियाँ ही होती है, जिनके साथ वो घंटों बीता देता है और एक नई ऊर्जा से भर जाता है। ये स्मृतियाँ जहाँ नैराश्य से बाहर निकालने का मार्ग सूझाती है, वही कुछ नया सीखने को भी प्रेरित करती है। विगत में कहाँ भूल हुई और क्या अच्छा किया जा सकता था, अमुक परिस्थिति का मुकाबला कैसे किया जा सकता है यह कुछ ऐसे मंत्र हैं ओ अतीत की स्मृतियों में गोता लगाने से ही हासिल किया जा सकता हैं और उन प्रगतिवादियों के एक प्रश्न का जवाब भी इसमें समाहित है, जो आधुनिक दौर में प्रगति के मार्ग में अतीत की स्मृति में जाने को महज समय की बर्बादी मानते है।" ('मेरी ईजा' पृष्ठ -7)

रमणीयता का अर्थ होता है – 'सुंदरता या मनोरम्यता। जो मन को अच्छा लगे, जिसे देखने से खुशी और आनंद उत्पन्न हो।'

सूरज जी का जन्मभूमि उतराखंड स्थित अलमौड़ा के नैकाना गाँव में है। जो पहाड़ी प्रदेश में स्थित है। उन्होंने अपना जीवनयापन पहाड़ों में केवल बिताया नहीं पर पहाड़ों के साथ और प्रकृति के साथ जीया है। सूरज जी ने इन पहाड़ी जीवन से बहुत कुछ सीखा और आनंदित जीवन व्यतीत भी किया है।

डॉ. सूरज सिंह नेगी द्वारा लिखित 'मेरी ईजा' संस्मरण में सूरज जी ने अपनी ईजा(माँ) के संघर्ष, माँ के द्वारा मिली सीख, मातृभूमि व पहाड़ी संघर्षमय जीवन होने के बावजूद जीवन कितने आनंद व उल्लास से जिया है उनका मनोरम्य चित्रण किया है।

सूरज जी के शब्दों में "यह संस्मरण बतौर लिखा जरूर गया है लेकिन प्रत्येक घटना, चरित्र, वाक्य के साथ मेरी रूह जुड़ी हुई है।" ('मेरी ईजा' पृष्ठ -8)

वैसे तो पहाड़ी जीवन अत्यंत संघर्षमय ही होता है, पर ऐसे संघर्षमय जीवन को भी सुंदरता से जीने का अंदाज हमे सूरज जी के संस्मरण 'मेरी ईजा' से प्राप्त होता है।

मैंने गूगल सर्च वेब से पहाड़ी जीवन के बारे में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया तो सभी जानकारी पहाड़ी जीवन के संघर्षमय जीवन और शहरी पलायन की माहिती ही प्राप्त हुई, पर सूरज जी का यह संस्मरण पढ़ने से इतना मालूम हुआ की भले पहाड़ी जीवन संघर्षमयी हो पर पहाड़ी लोग किस तरह से एक दूसरे को सहयोग देते है और अपनी संस्कृति का जतन करके, अच्छा व्यवहार से आनंदमय जीवन जीते है इसकी झांकी हमे होती है।

पहाड़ी लोगों का प्रकृति के साथ अत्यधिक जुडाव होता है। इस संस्मरण में एक केशर सिंह बाबू का पात्र आता है, जिन्हे प्रकृति से अत्यधिक लगाव था। वे हमेशा अपने घर के आँगन में चबूतरे पर एक तुलसी का पौधा रखते थे। चबूतरे को गोबर से लीप कर साफ-सुथरा रखते। उनके बगीचे में आम, अनार, जामून, अमरुद के वृक्ष थे। उस समय कच्चे फलों को पकाने के लिए आज की तरह रसायनों का प्रयोग नहीं करते थे। वह आम जैसे फलों को पाल से (घास में रखकर) पकाते थे। जब आम पकते तब उसकी मीठी सुगंध पूरे मोहल्ले में फैल जाती। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -47)

नैकाना गाँव में स्टेशनरी एवं आवश्यक चीज लाने के लिए मासी जाना पड़ता था। जो पाँच- छः किलोमीटर का होता था। जहाँ पैदल चल के जाना पड़ता था। पहाड़ों पर यह दूरी समतल मार्ग की नहीं होती। पगडंडियों को पार करते हुए ऊंचाई, नीचाई और चढ़ाई को पार करते हुए जंगल पार करना पड़ता था। पहाड़ का मार्ग ऊबड़-खाबड़ था, साथ में निर्जन होने के कारण कई शंका-कुशंका होती फिर भी सूरज जी अपने सहपाठियों के साथ हंसी ठिठोली करते चलते हुए रास्ते को सुगम बना देते। (('मेरी ईजा' पृष्ठ -66,)

पहाड़ी लोगों की विशेषता यह है कि वे लोग हमेशा एक-दूसरे में भाई- चारा रखते है। बेल गाँव नैकाना से दो किलोमीटर की दूरी पर था, पर इन दो गाँव में इतना अधिक भाई- चारा था कि किसी बाहर के व्यक्ति को गाँव का परिचय देते तो बेल-नैकाना गाँव ही बताते। बेल गाँव से नैकाना गाँव के एक दूसरे के मकान, खेत, जंगल, पगडंडियाँ आसानी से दिखाई देती है और सीमा जुड़ी हुई है। केवल भौतिक सीमा ही नहीं मन भी जुड़े हुए है। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -70)

पहाड़ी लोगों में बच्चों के प्रति अटूट स्नेह है। सूरज जी स्कूल जाते तब आते-जाते लोग कुमाऊँनी भाषा में हमेशा पूछते –"तू काक च्यल/चेली छै" (तुम किसके बेटे/बेटी हो) जब ईजा- बाज्यू का नाम बताते तो लाड़ करते हुए सिर पर हाथ फेरते। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -71)

यह प्रेम के बारे में सूरज जी के शब्दों में "कितना असीम प्रेम था तब राह चलते बच्चों को रोक उनसे बतियाना और उनको लाड़ करना उस पर्वतीय प्रदेश के कठोर जीवन का एक अभिन्न पहलू था। शायद उन कुछेक कारणों में यह भी एक कारण रहा हो जो कठोर जीवन, विषम भौगोलिक परिस्थितियों के मध्य वहाँ के निवासियों के जीवन में रंग ढोलने का काम करता है।" ('मेरी ईजा' पृष्ठ -71)

पहाड़ी स्थानों की कुदरती प्राकृतिक छटा इतनी नयनरम्य है कि प्राकृतिक दृश्यों को निहारते रहे। सर्दी के दिनों में ठिठुरन के कारण कक्षा में बैठना संभव न हो तो स्कूल के मैदान कुनकुनी धूप में विद्यार्थी को बिठाया जाता, जहाँ से नागाधिराज कैलाश पर्वत, लहलहाते सरसों के खेतों पर या गगनचुंबी पेड़ों पर विद्यार्थी की नजर जाती। यह देखकर सूरज जी को भी एक अलग ही सुकून मिलता। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -78)

पहाड़ी लोग उत्सव प्रिय अधिक होते है। तीज-त्योहारों का पहाड़ी जीवन में अलग ही महत्व है। कठोर जीवन और विषम भौगोलिक परिस्थितियों के मध्य अनेक त्योहार और कौतिक(मेले) वहाँ के निवासियों के जीवन में अनेक

खुशियाँ और रोमांच लेकर आता। दूर बसे रिश्तेदारों, बहिन-बेटियाँ भी ऐसे मौकों पर अपनों के बीच आकर एक-दूसरे को मिलकर सुख-दु:ख के बारे में बात करके भावविभोर हो जाती।('मेरी ईजा' पृष्ठ -91,113)

होली का त्योहार पहाड़ी लोगों के जीवन में अनेक उमंग लेकर आता है। होली के दिन लोग अलग-अलग पहेरवेश पहनकर लोग होलियारे बनकर शिव-पार्वती, राधा-कृष्ण, कौरव-पांडव आदि के गीत गाते, ढोल, दमाऊ, हुड़का की आवाज करते हुए भूमिया मंदिर, शिवालय जाकर होली के गीत गाते है। यह त्योहार पूरे पाँच दिन चलता है। होलियारे पाँच दिन पूरे गाँव के प्रत्येक घर जाकर होली के गीत गाते है। वहाँ से होलियारे को गुड़ दिया जाता है, जो आपस में सब बाँट देते है। रात में अग्निकुंड में लकड़ियाँ जलाई जाती है मानो नैकाना गाँव में पूर्णिमा का चाँद अपनी रोशनी के रश्मिपुंजों के साथ होली की मस्ती में शामिल हुआ हो। यह नजारा देखने के लिए आसपास के गाँव के लोग, बच्चे, स्त्री-पुरुष सभी आते। अबील गुलाल से सब के चहेरे रंगे जाते और सब के मन खुशी के रंग से भर जाता।('मेरी ईजा' पृष्ठ -93)

बौग्याव(दीपावली) के दिनों पहाडी विस्तारों में उन दिनों बिजली की सेवा न के बराबर थी। सब दीपावली के दिन में नाटकों का मंचन करते। सब अपने घर में चीड़ की लकड़ी से बना छिलुक जलाते। चारों ओर छिलुक जलाने से पूरी पहाड़ी की घाटी जगमगाती नजर आती। बच्चे पटाखे, फुलजड़ियाँ जलाते और आनंद करते हुए एक नई यादें बनाते हुए तीन दिन दीपावली का त्योहार मनाते। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -95)

घुघुती सग्यान(मकर संक्रान्ति) उस दिन घूघते(आंटे से तैयार किया जाने पकवान) बनाया जाता है। घर में घूघते गरम तेल में सेककर पितरो का आह्वान करके आँगन के मुंडेर पर रख दिया जाता। जिससे पितरो प्रसन्न होते और उनका आशीर्वाद मिलता। इस तरह फूल संक्रान्ति, हरेला आदि त्योहार उत्साह के साथ मनाया जाता। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -96)

त्योहार की भाँति पहाड़ी जीवन का अभिन्न अंग मेले भी है। पहाड़ों मे आयोजित मेलों में पहाड़ी जीवन के सांस्कृतिक रूप और उनकी कला के दर्शन होते है। पहाड़ी लोग इस मेले के माध्यम से अपने कष्ट, कठोर मेहनत, पहाड़ का जीवन भूलकर मेलों के रंग में रंग जाते है। वे मेले का हिस्सा मानकर खुद को भाग्यशाली मानते।

पहाड़ी जीवन में स्याल्दे बिखौली कौतिक, सोमनाथ मेला,केदार का मेला, ध्यौं सग्यान कौतिक इत्यादि मेले होते। जिसमें कुमाऊँनी लोक संस्कृति के दर्शन होते है। द्वाराहाट चौक में एक बड़े पत्थर पर चोट मारकर आगे बढने की परंपरा को ओढ़ा भेंटना कहते है। यह स्याल्दे बिखौती कौतिक की मुख्य सांस्कृतिक विशेषता मानी जाती है, जो सदियों से चलती आ रही है और आज भी जीवंत है। वहाँ मेले में झोड़ा का समूह कुमाऊँनी भाषा में गीत गाते है।('मेरी ईजा' पृष्ठ -103,104)

रामगंगा नदी में पत्थर फेंकने की अनूठी प्रतियोगिता होती है। इस प्रतियोगिता में कौत्यारों(मेलार्थियों) में विजयी होने का जोश देखने मिलता है। मेले में कई प्रकार के कुमाऊँनी गीत चलते है, तो झोड़ो के द्वारा गीत गया जाता। हुड़का, दमुआ, रणसिंह इत्यादि वाद्य बजाते है। मेले में कई महिला बहिन-बेटिया चीड़ के पेड़ के नीचे बैठकर बाते करते है। वे अपने कष्टभरे जीवन को भूलकर मेले के त्योहार में भरपूर आनंद प्राप्त करती। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -107)

पहाड़ों में प्राकृतिक सामीप्य के अलावा देवी-देवताओं से भी निकटता देखने मिलती है। पहाड़ी चोटियों पर देवी देवता का थान(मंदिर) होता है। उसकी पूजा-अर्चना की जाती है। वैसे तो उत्तराखंड की भूमि को देवता की भूमि मानी जाती है। वहाँ बसनेवाले लोग कठिन परिस्थतियों के चलते वे अपने ईश्वर को ही सब कुछ मानते है और विपत्ति में सब कुछ ईश्वर पर छोड़ देते है। प्रत्येक क्षेत्र में अपने ग्राम देवता का स्थान होता है। जो पहाड़ियों की ईश्वरीय श्रद्धा को दर्शाता है। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -106,120)

पहाड़ी लोगों की महत्वपूर्ण विशेषता यही रही है कि विषम परिस्थिति में रहकर भी लोग एक जुट होकर रहते है और एक दूसरे को सहयोग देते है। गाँव के किसी के घर में कोई काम हो- घास काटना हो, च्यूड़ा निकलना हो तो मोहल्ले के लोग एक दूसरे को हँसते, गाते और बाते करते आपसी तालमेल से उस कार्य को पूरा करते। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -114)

सूरज जी जब भी अपनी मातृभूमि नैकाना जाते है तो आसपास के गाँव वालों और गाँव के लोगों से हमेशा स्नेह और सम्मान मिलता है। आज पहाड़ी जीवन में कई बदलाव आए है फिर भी लोगों में आपसी सद्भावना, स्नेह, और अपनेपन का भाव देखने मिलता है। ('मेरी ईजा' पृष्ठ -135)

आपसी स्नेह क बारे में सूरज जी के शब्दों में "चालीस सालों में बहुत कुछ बदल गया लेकिन एक बार जिसने खास प्रभावित किया वो था कि अभी भी बहुत कुछ है जो नहीं बदला है और वो है गाँव में लोगों के मध्य आपसी प्रेम, सहजीवन, सहयोग की भावना, सुख-दुख में एक जुट होने की प्रवृति। आपस में वैचारिक मतभेद भले ही हों, मन मुटाव हो लेकिन जैसे ही किसी पर विपत्ति आ पड़ती है या किसी के घर में कोई काम-काज हो, पूरा गाँव सब कुछ भूलकर एक जुट होकर काम को अंजाम देने के में लग जाता है। शायद यही तो जीवन मूल्य है जो पहाड़ी संस्कृति को आज भी जीवंत बनाए हुए है।('मेरी ईजा' पृष्ठ -162)

संदर्भ

- इंटरनेट की वेब साइट
- 'मेरी ईजा' (संस्मरण) ले. डॉ. सूरज सिंह नेगी (2023) वान्या पब्लिकेशन्स
- वही पृष्ठ-7
- वही पृष्ठ-8
- वही पृष्ठ-47
- वही पृष्ठ-66
- वही पृष्ठ-70
- वही पृष्ठ-71
- वही पृष्ठ-78
- वही पृष्ठ-91,113
- वही पृष्ठ-93
- वही पृष्ठ-95
- वही पृष्ठ-96
- वही पृष्ठ-103,104
- वही पृष्ठ-107
- वही पृष्ठ-106,120
- वही पृष्ठ-114,135,162